P. R. No.: DL(S)-17/3082/2006-07-08
Regn. No.: DELHIN/2000/2473

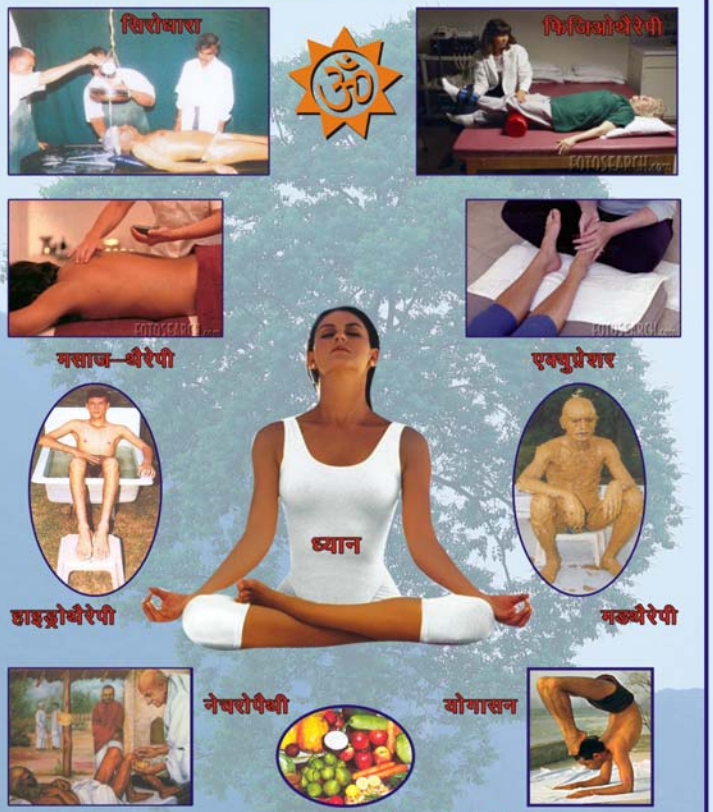

एम. एस. आर. नेचरोपैथी,
योगा एंव आयुर्वेदिक हॉस्पिटल
जैन मंदिर आश्रम, रिंग रोड,
सराय काले खाँ पेट्रोल पम्प के पीछे, नई दिल्ली – 110 013
फोन – 011–26327911, 9213373656

प्रकाशक व मुद्रक : श्री अरुण तिवारी, मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.) जैन मंदिर आश्रम, सराय काले खाँ के सामने रिंग रोड़, पो. बो.–3240, नई दिल्ली–13, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) ओखला फेस–1 से मुद्रित। संपादिका : श्रीमती निर्मला पुगलिया

मार्च, 2007 मूल्य 5.00 रूपये

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

होलिकोत्सव का नजारा ।

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

वर्ष : 7 अंक : 03 मार्च, 2007

: मार्गदर्शन :

पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्रीजी

: सम्पादक मंडल :

श्रीमती निर्मला पुगलिया,
श्री सतीश जैन (पत्रकार)
श्रीमती मंजु जैन

: व्यवस्थापक :

श्री अरूण तिवारी

एक प्रति : 5 रुपये
वार्षिक शुल्क : 60 रुपये
आजीवन शुल्क : 700 रुपये

: प्रकाशक :

मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के
सामने नई, दिल्ली-110013

फोन नं. : 26315530, 26821348

Website: www.manavmandir.com
E-mail : contact@ manavmandir.com

इस अंक में

01.	आर्ष वाणी	-	5
02.	बोध कथा	-	5
03.	संपादकीय	-	6
04.	गुरूदेव की कलम से	-	7
05.	सामयिक चिंतन	-	14
06.	कहानी	-	17
07.	अध्यात्म	-	18
08.	जीवन-यात्रा	-	21
09.	कहानी	-	25
10.	चांद धरती पर	-	25
11.	स्वास्थ्य	-	28
12.	मंत्र रहस्य	-	29
13.	बोलें-तारे	-	30
14.	समाचार दर्शन	-	33
15.	क्या करूं ?	-	34

रूपरेखा-संरक्षक गण

श्री विरेन्द्र भाई भारती बेन कोठारी,ह्युष्टन, अमेरिका
श्री शैलेश उर्वशी पटेल, सिनसिनाटी
श्री प्रमोद वीणा जवेरी, सिनसिनाटी
श्री महेन्द्र सिंह सुनील कुमार डागा, बैंकाक
श्री सुरेश सुरेखा आवड़, शिकागो
श्री नरसिंहदास विजय कुमार बंसल, लुधियाना
श्री कालू राम जतन लाल बरड़िया, सरदार शहर
श्री अमरनाथ शकुन्तला देवी, अहमदगढ़ वाले, बरेली
श्री कालूराम गुलाब चन्द बरड़िया, सूरत
श्री जयचन्द लाल चंपालाल सिंघी, सरदार शहर
श्री त्रिलोक चन्द नरपत सिंह दूगड़, लाडनूं
श्री भंवरलाल उम्मेद सिंह शैलेन्द्र सुराना, दिल्ली
श्रीमती कमला बाई धर्मपत्नी स्व. श्री मांगेराम अग्रवाल, दिल्ली
श्री धर्मपाल अंजनारानी ओसवाल, लुधियाना
श्री प्रेमचन्द ओमप्रकाश जैन उत्तमनगर, दिल्ली
श्रीमती मंगली देवी बुच्चा धर्मपत्नी
स्वर्गीय शुभकरण बुच्चा, सूरत
श्री पी.के. जैन, लॉर्ड महावीरा स्कूल, नोएडा
श्री द्वारका प्रसाद पतराम, राजली वाले, हिसार
श्री हरबंसलाल ललित मोहन मित्तल, मोगा, पंजाब
श्री पुरुषोत्तमदास हरीश कुमार सिंगला, लुधियाना
श्री विनोद कुमार सुपुत्र श्री बीरबल दास सिंगला, संगरूर
श्री अशोक कुमार सुनीता चोरड़िया, जयपुर
श्री सुरेश कुमार विनय कुमार अग्रवाल, चंडीगढ़

डॉ. कैलाश सुनीता सिंघवी ,न्यूयार्क
डॉ. अंजना आशुतोष रस्तोगी, टेक्सास
श्री केवल आशा जैन, टेम्पल, टेक्सास
श्री उदयचन्द राजीव डागा, ह्युष्टन
श्री आलोक ऋतु जैन, ह्युष्टन
श्री अमृत किरण नाहटा, कनाडा
श्री गिरीश सुधा मेहता, बोस्टन
श्री राधेश्याम सावित्री देवी हिसार
श्री मनसुख भाई तारावेन मेहता, राजकोट
श्रीमती एवं श्री ओमप्रकाश बंसल, मुक्सर
डॉ. एस. आर. कांकरिया, मुम्बई
श्री कमलसिंह-विमलसिंह बैद, लाडनूं
श्रीमती स्वराज एरन, सुनाम
श्रीमती चंपाबाई भंसाली, जोधपुर
श्रीमती कमलेश रानी गोयल, फरीदाबाद
श्री जगजोत प्रसाद जैन कागजी, दिल्ली
डॉ. एस.पी. जैन अलका जैन ,नोएडा
श्री राजकुमार कांतारानी गर्ग, अहमदगढ़
श्री प्रेम चंद जिया लाल जैन, उत्तमनगर
श्री देवराज सरोजवाला, हिसार
श्री राजेन्द्र कुमार केडिया, हिसार
श्री धर्मचन्द रवीन्द्र जैन, फतेहाबाद
श्री रमेश उषा जैन, नोएडा
श्री दयाचंद शशि जैन, नोएडा
श्री प्रेमचन्द रामनिवास जैन, मुआने वाले
श्री संपतराय दसानी, कोलकाता

बुलंदी से भी गुजरा हूँ और पस्ती से भी गुजरा हूँ ।
मगर जिस राह से गुजरा हूँ बड़ी मस्ती से गुजरा हूँ ।।

आर्ष-वाणी

चक्खुस्स रूवं गहणं वयंति, तं राग हेउं मणुन्न माहु
तं दोस देउं अमणुन्न माहु, समो यजो तेसु स वीयरागो।।

आगम वचन

अर्थात्–आंख का ग्राह्य विषय है रूप। उसमें जो मनोज्ञ है वह राग का हेतु है और अमनोज्ञ है वह द्वेष का हेतु है मनोज्ञ और अमनोज्ञ में जो सम रहता है वह वीतराग है।

बोध-कथा

नारी का कौशल

भगवान शिव और पार्वती एक बार आकाश मार्ग से घूमने निकले। पार्वती की दृष्टि अकस्मात् पृथ्वी पर पड़ी। धरती पर पानी के अभाव में लोगों की दुर्दशा देखकर उन्होंने शिव से निवेदन किया कि इसका कोई उपाय करें अन्यथा पानी के अभाव में धरती के सभी प्राणी मर जायेंगे।

शिव ने कहा, ''पृथ्वी पर सात वर्ष तक अकाल छाया रहेगा इस बीच में मेरे द्वारा शंख बजाये बिना धरती पर वर्षा होना संभव नहीं है।''

पार्वती ने थोड़ा–सा आगे चलकर एक किसान को हल चलाते देखकर शिव से पूछा,''वर्षा के अभाव में यह किसान हल क्यों चला रहा है?''

शिव ने बताया, 'किसान हल इसलिए चला रहा है कि कहीं वह हल चलाना ही न भूल जाये।''

पार्वती ने शिव से शंख बजाने का आग्रह किया। परंतु शिव नहीं माने।

पार्वती को एक बात सूझी और शिव से कहा, 'किसान हल इसलिए चला रहा कि वह कला को भूल न जाये। परंतु मुझे यह चिंता है कि कहीं आप सात वर्ष तक अकाल छाये रहने की स्थिति में शंख बजाने की कला भी भूल जायेंगे तो ?''

शिव ने कहा, ''मेरे लिये यह संभव नहीं है।''

पार्वती बोली,''मेरे ख्याल से तो आप अभी भी भूले हुए ही लगते है।''

भगवान शंकर तैश में आ गये और पार्वती को प्रमाण देने के लिए उन्होंने उसी क्षण शंख बजा दिया।

शंख–ध्वनि प्रसारित होते ही काले बादल छा गये और धरती पर वर्षा होने लगी।

सम्पादकीय

होली के रंग सहेलियों के संग

होली आने वाली है। उसमें सिर्फ होलिका दहन का ही रिवाज नहीं है। होली खेलने का आनंद अपने में अपूर्व है। उस रंग में भींग कर ऐसा लगता है मानो स्वर्गीय सुख के स्वाद में डूबे हुए हैं। सहेलियां साथ हों तो उस आनंद का कहना ही क्या। जैन कथानकों में एक प्रसंग आता है। 22 वें तीर्थंकर अरिष्टनेमी जब पूर्ण यौवनावस्था में आ जाते हैं, तब एक दिन घूमते-घूमते वासुदेव श्री कृष्ण की आयुधशाला में चले जाते हैं और वहां पर जो पांचजन्य शंख था जिसको वासुदेव के सिवा कोई नहीं बजा सकता उसको उठा कर बजा देते हैं। इस बात का पता जब श्री कृष्ण को लगा तो उनके दिल में इस बात का भय होना स्वाभाविक था कि आज ही यह इतना ताकतवर है बड़ा होके ना जाने क्या करेगा। क्योंकि श्री अरिष्टनेमि के श्री कृष्ण चचेरे भाई थे। श्रीकृष्ण नहीं चाहते थे कि रिश्तेदारी में किसी तरह की दरार पड़े इसलिए श्री कृष्ण ने यह काम अपनी रानियों को सौंपा कि वे अरिष्टनेमि को शादी के लिए तैयार करे। वे किसी भी शर्त पर शादी करवा नहीं रहे थे। तब श्री कृष्ण की रानियों ने होली का मौका देखकर कहा चलो देवर जी अपने भैया के साथ आप भी आजाओ। हम बगीचों में होली खेलेंगे।

श्री अरिष्टनेमि भाभियों के कहने से होली खेलने के लिए तैयार हो गए। वहां श्रीकृष्ण तथा उनकी रानियां और अरिष्टनेमि सब मिलकर खूब जमकर होली खेल रहे हैं। होली की पिचकारियों से श्री कृष्ण के कपड़े भींगकर गीले हो जाते हैं तो उनकी महारानियां झट दौड़ दौड़ कर निचोड़ देती हैं और सुखाकर उनको दे देती हैं लेकिन अरिष्टनेमि के कपड़े कौन निचौड़े? तब सभी रानियां उनकी खूब मजाक करती हैं। देवर जी आप अब देर मत करिए। शादी कर लीजिए फिर जैसे आपके भैया की सहायता हम करती है वैसे आपकी सहायता करने वाली भी आपकी महारानियां होंगी। इस तरह की बात में नेमिनाथ से शादी के लिए हामी भरवा ली और झटपट शादी का मुहूर्त निकलवाकर शादी के लिए बारात जाने लगी। नेमिनाथ जैसी विरक्त आत्मा को न सत्ता की लालसा थी और न ही शादी या व्याह की। बिल्कुल निस्पृह। होली के रंगों से भी रंगे नहीं गए थे। सर्वथा विरक्त भाव से होली खेल रहे थे। नियति वश भाभियों के शब्द जाल में बंध गए और शादी की हामी भर ली। लेकिन जैसे बारातियों के भोजन के लिए बाड़ों में पशुपक्षियों को चीखते सुना नेमिनाथ का दयार्द्र हृदय कांप गया। वहीं से अपने रथ को वापस मुड़वा लिया और सीधे वहीं से गिरनार पर्वत पर आरोहण कर आत्मा की उंचाई पर चढ़ने की तैयारी कर ली। इसी तरह पीछे पीछे राजुल ने भी वही रास्ता अख्तियार किया जो नेमिनाथ ने किया। यह है असली सतीत्व का रंग होली के संग।

○ निर्मला पुगलिया

मन के मालिक बनें, गुलाम नहीं

○ गुरुदेव की कलम से

वह लम्बे समय से गुरूदेव की सान्निधि में था। किन्तु उसे अभी दीक्षा मन्त्र नहीं मिल पाया था। अनेक बार उसने दीक्षा मंत्र के लिये निवेदन भी किया, किन्तु हर बार गुरूदेव मौन रहे। गुरूदेव ने देखा, उसका मन अभी साधना में रमा नहीं है। इसलिये मंत्र देना जल्दबाजी होगी। किन्तु एक दिन वह अत्यंत अधीरता से बोला, गुरूदेव आखिर मुझे मंत्र कब मिलेगा। गुरूदेव उसकी मनः स्थिति को भांप गये। बोले- कल सबेरे सूरज की पहली किरण के साथ तुम्हें दीक्षा-मंत्र देंगे। इतना सा ध्यान रखना इस बीच की अवधि में बंदर का ख्याल मन में न आना चाहिए।

वह बड़ा खुश हुआ। वर्षों की साथ कल पूरी होगी। गुरू देव से मंत्र मिलेगा। बंदर का खयाल तो उसे वर्षों में नहीं आया। अत्यंत आसान शर्त है यह तो। तभी उसने देखा, मन के पेड़ की डाल पर कोई बंदर बैठा है। अरे, यह बंदर यहां कैसे आया? आज तक नहीं आया था, फिर आज आया तो कैसे? अब वह बंदर को खयालों से निकालने की कोशिश करने लगा। किन्तु यह क्या ? अब तो बंदर चारों ओर से आने लगे। जिधर भी नजर जाये, बंदर-ही बंदर । पूरी तरह घबरा गया। सोचा, सो जाऊं ताकि नींद आने पर बंदरों से स्वंय छुटकारा मिल जायेगा। किन्तु सपने में भी बंदर-ही-बंदर दिखाई देने लगे।

सबेरे सूर्योदय से पहले गुरूदेव के समीप आया। चेहरा बड़ा उदास था। गुरूदेव ने कहा- दीक्षा मंत्र प्रदान करने का समय आ गया है। तुमको पिछली अवधि में बंदर का ख्याल आया तो नहीं? शिष्य रूआंसे स्वर में बोला-गुरूदेव, पता नहीं, इस मन को क्या हो गया है ? जबसे आपने मंत्र दानकी स्वीकृति प्रदान की है, खयालों में बंदर-ही-बंदर आ रहे हैं। मैंने इन्हें रोकने का, मन में बंदरों को न आने देने का जितना संकल्प किया है, बंदर भी उतने वेग से आने लगे हैं। जागते ही नहीं, नींद में भी बंदरों ने पीछा नहीं छोड़ा। रात-भर सपने बंदरों के ही आये। आश्चर्य इस बात का है इससे पहले बंदरों का खयाल कभी आया ही नहीं था। और अब, जबसे आपने बंदरों को खयाल में न लेने का निर्देश दिया है, बंदर पीछा ही नहीं छोड़ रहे है।

गुरूदेव बोले-मंत्र लेने से पहले इस मन को समझना बहुत जरूरी है। बिना मन को समझे, मंत्र सध नहीं पायेगा। मन के सधे बिना, मंत्र का देना, न देने के बराबर होगा। इतना ही नहीं, मंत्र के प्रति अश्रद्धा का कारण भी वह बन सकता है। बिना सधे-मंत्र का जाप सही ढंग से नहीं हो पायेगा। बिना सही जाप के, मंत्र सिद्ध नहीं होगा। मंत्र की निष्फलता का कारण होता है मन का सधा न होना। किन्तु जाप करने वाला कई बार उस निष्फलता के कारण मंत्र शास्त्र के प्रति ही अश्रद्धा कर लेता है। इसलिए मंत्र दीक्षा से पहले मन की समीक्षा बहुत जरूरी है।

मन की चंचलता-एक सनातन समस्या

मन की चंचलता का प्रश्न केवल उस शिष्य से ही नहीं जुड़ा था, यह लगभग हर व्यक्ति के साथ जुड़ा है। महावीर वाणी में महाश्रमण केशीकुमार और श्रीमद्-भगवद्-गीता में धनुर्धर अर्जुन भी इसी समस्या से व्यथित हैं।

अर्जुन श्रीकृष्ण से आकुल स्वरो में कहते है-

चंचलं हि मनः कृष्णः, प्रमाथि बलवद् दृढम्
तस्याहं निग्रहं मन्ये, वायोरिव सुदुष्करं

भगवन् यह मेरा मन बड़ा चंचल है, प्रमथनशील है, हठी है, जिद्दी है, वायु की तरह इसे पकड़ में लेना अत्यंत दुष्कर है, मैं इसका निग्रह कैसे करूं?

अर्जुन श्रीकृष्ण की बुआ का लड़का है, बहिन सुभद्रा का पति है, सखा है, शिष्य हैं। उधर श्रीकृष्ण उसके रथ के सारथि हैं, परामर्श-दाता हैं, मार्ग दर्शक है। वह महान धनुर्धर, महा-बली अर्जुन भी मन के सामने अपने को कमजोर, असहाय महसूस कर रहे हैं।

उधर महावीर वाणी में महाश्रमण केशी कुमार गणधर गौतम से कहते हैं-

अयं साहसिओ भीमो, दुट्ठस्सो परिधावई
जंसि गोयम आरूढ़ो, कहं तेण न हीरसि ?

हे गौतम, जिस अश्व पर तुम आरूढ़ हो, वह साहसी है, बिना सोचे विचारे दौड़ने वाला है, भीम-भयंकर है, दुष्ट है, निरंतर दौड़ रहा है, वह तुम्हारा हरण क्यों नहीं करता। महाश्रमण केशीकुमार विशिष्ट ज्ञान के स्वामी हैं। वे यहां पर जिस अश्व की चर्चा कर रहे हैं, उसका संकेत इस मन से ही है। यह मन घोड़ा बड़ा साहसी है। आज की भाषा में साहसी शब्द सम्मानपरक अर्थ लिये है। साहसी अर्थात् वीर-वृत्ति धारण करने वाला। यह

साहसी शब्द का उत्कर्ष है। प्राचीन भारतीय साहित्य में साहसी शब्द का अर्थ था, बिना सोचे विचारे काम करने वाला। केशी कह रहे है, गौतम यह मन का घोड़ा बड़ा साहसी है, भीम है और दुष्ट है, सारे जगत का इसके द्वारा अपहरण हो रहा है। लेकिन आप बचे हुए है वह कैसे ?

अभ्यास और वैराग्य से मनो-निग्रह संभव

महाबली अर्जुन हो या महाश्रमण केशीकुमार, सवाल वही है जो हम सबसे जुड़ा है। मन की चंचलता खत्म हो तो कैसे ? हम पंथ बदल लेते हैं, गुरू बदल लेते हैं, मंत्र बदल लेते हैं, किन्तु मन का बदलना तो आसान नहीं होता। और मन न बदला तो पंथ, गुरू और मंत्र बदलने का कोई लाभ नहीं। इसलिए मनो-निग्रह पर सबसे पहले ध्यान देना जरूरी है। मन का निग्रह कैसे हो, अर्जुन के इस प्रश्न के उत्तर में भगवान कृष्ण कहते हैं-

असंशयं महाबाहो, मनो दुर्निग्रहं चलम्
अभ्यासेन च कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते।

अर्जुन, तुम्हारे इस कथन में कोई संशय नहीं है कि यह मन बड़ा चंचल है। इसका निग्रह करना बड़ा कठिन है। इसके निग्रह के दो ही उपाय है-अभ्यास और वैराग्य। श्रीकृष्ण कह रहे हैं मन पर निग्रह पाने के लिए दो ही उपाय है एक है अभ्यास और दूसरा है वैराग्य। अभ्यास का अर्थ है बार-बार प्रयास और वैराग्य का अर्थ है विरक्ति। अभ्यास और वैराग्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जप और ध्यान में मन एकाग्र हो, इसके लिये पुनःपुनः प्रयास करना अभ्यास है। किन्तु अभ्यास से भी मन सधेगा तभी, जब मन में इन्द्रिय-विषयों के प्रति वैराग्य का भाव होगा। भीतर में आकर्षण जहां होगा, मन तो बार-बार ही उधर जाएगा। अगर हमारा आकर्षण सांसारिक विषयों में है, तो जप-ध्यान में वह वाधा उपस्थित करेगा ही। जिन लोगों की यह शिकायत है कि जप ध्यान के समय मन एकाग्र नहीं होता, उनसे संत-पुरूष पूछ लेते हैं, रूपयों की गिनती करते समय मन लगता है या नहीं ? उत्तर मिलता है, महाराज श्री, रूपयों के नोट गिनते समय तो मन खूब लगता है, जरा भी नहीं हिलता। जो मन माया में तल्लीन हो, उसको भजन-ध्यान में तल्लीनता कैसे आए ? इसलिए जरूरी है इन्द्रिय-विषयों के प्रति आकर्षण टूटे। सर्वथा न भी टूटे, किन्तु थोड़ा हटे तो सही। विषयों से मन जब थोड़ा सा हटेगा, तभी जप ध्यान में लग सकेगा। विषयों के प्रति आसक्ति टूटेगी तभी जप-ध्यान में निष्ठा गहरी हो पाएगी। इसीलिए श्रीकृष्ण कह रहे हैं-अर्जुन अभ्यास और वैराग्य से ही मन का निग्रह संभव है-

अभ्यासेन च कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते।

अभ्यास साधना का प्रमुख हिस्सा है। यह केवल आत्म साधना का ही नहीं, किसी भी विद्या को सीखने, साधने का प्रमुख अंग है। हम जिस किसी विद्या को सीखना चाहते हैं, उस पर अधिकार अभ्यास से ही संभव हो पाएगा। उस विद्या को हासिल करने में प्रतिभा का विशेष स्थान होता है, किन्तु अभ्यास का स्थान प्रतिभा से भी अधिक महत्वपूर्ण है। देखा यह गया है अभ्यास के अभाव में प्रतिभा संपन्न व्यक्ति भी अपने विषय में पिछड़ जाते हैं। और कमजोर प्रतिभा वाले अभ्यास के बल पर बड़ी-बड़ी योग्यताएं हासिल कर लेते हैं। एक बहुत प्रसिद्ध दोहा है-

करत-करत अभ्यास के जड़ मति होत सुजान।
रस्सी आवत जात है, शिल पर होत निशान।।

रस्सी के निरंतर आने-जाने से पत्थर की शिला पर भी गड्ढा पड़ जाता है। ठीक इसी प्रकार निरंतर अभ्यास से जड़ बुद्धि व्यक्ति भी विद्वान् हो जाता है। अभ्यास और वैराग्य शब्द से बहुत बार हम उलझन में पड़ जाते हैं। हमें लगता है दोंनों ही बहुत ही कठिन हैं। और यह भी लगने लगता है अगर अभ्यास और वैरागय ही हो, फिर मन की समस्या ही न रहे। किन्तु इसमें उलझन जैसा कुछ भी नहीं है। जिसे हम साधना चाहते हैं, अभ्यास उसके संस्कारों को दृढ़ता प्रदान करता है। जब
साधना के संस्कार दृढ़ होंगे, विपरीत संस्कार स्वंय शिथिल होते चले जाएंगे। जब आत्मा के संस्कार दृढ़ होंगे, तब शरीर के संस्कार स्वयं कमजोर हो जाएंगे। जब भक्ति के संस्कार बलवान होंगे, तब विषयों के प्रति जगने वाले संस्कार स्वयं क्षीण होते जाएंगे। इसी तरह जब विषयों के प्रति वैराग्य भाव जगेगा, तब भक्ति में दृढ़ता आने लगेगी। यों कहना चाहिए, दोनो एक दूसरे पर आश्रित हैं। भक्ति में दृढ़ता से विषयों की आसक्ति टूटेगी। विषयों के प्रति अनासक्ति से भक्ति में दृढ़ता आयेगी। आचार्य महाराज कहते हैं-

यथा-यथा समायाति संवित्तौ तत्वमुत्तमम्,
तथा-तथा न रोचन्ते विषयाः सुलभा अपि।
यथा-यथा न रोचन्ते विषयाः सुलभा अपि,
तथा-तथा समायाति संवित्तौ तत्वमुत्तमम्।

जैसे-जैसे ज्ञान में उत्तम तत्वों का समागम होता है, वैसे-वैसे सुलभ विषय भी रूचिकर नहीं लगते। जैसे-जैसे सुलभ विषयों से रूचि हटती है, वैसे-वैसे ज्ञान में उत्तम तत्वों का समागम होता है। अभ्यास से वैराग्य बढ़ता है। वैराग्य से अभ्यास बढ़ता है। भक्ति से

यह चित्त वैराग्य को प्राप्त होता है। वैराग्य से इस चित्त में भक्ति बलवती होती है। कठिन कुछ भी नहीं है। पूरी प्रक्रिया को मात्र समझना है। मात्र ज्ञान और विवेक को जाग्रत करना है। इसी अभ्यास और वैराग्य को भगवान महावीर एक ही शब्द में समेट देते हैं। वह शब्द है विवेक। महाश्रमण केशी-कुमार के प्रश्न के उत्तर में गणधर गौतम कहते है-

मणो साहसिओ भीमो, दुटद्स्सो परिधावइ,
तं सम्मं निगिण्हामि धम्म सिक्खाए कंथगं।

यह सही है कि यह मन साहसी- बिना सोचे विचारे दौड़ने वाला है, भयंकर है, दुष्ट घोड़े की तरह उच्छृंखल हैं। मैं धर्म-शिक्षा यानि विवेक की लगाम से इसका निग्रह करता हूं।

मन का निग्रह आवश्यक

मन का निग्रह अभ्यास और वैराग्य से हो अथवा विवेक से, किन्तु निग्रह होना जरूरी है। आज कुछ धर्म-गुरू मन को खुलां छोड़ने की वकालत करते दिखाई देते है। किन्तु मन को खुला छोड़ना, मन की चंचलता मिटाने का समाधान कभी नहीं बन सकता। यद्यपि मन को दबाना भी सही नहीं है, किन्तु मन को खुला छोड़ना भी उचित नहीं कहा जा सकता है। न दबाना है और न खुला छोड़ना है, किन्तु मन का निग्रह करना है। मन अगर दबता है, तब भी दुखःदायी है। सुखदायी वह तब होता है जब उस पर निग्रह होता है, जब हम उसके मालिक होते हैं, जब मन हमारा गुलाम होता है।

अभी यह मन समस्या इसलिए हुआ है कि वह हमारा मालिक बना हुआ है। होने चाहिए थे हम उसके मालिक, किन्तु बना हुआ है वह हमारा मालिक। सारी समस्याओं का उपादान यही है। समझना यह है कि हमारी जीवन संरचना में बुद्धि, मन, इंद्रियां ये मालिक नहीं हैं। मालिक है चेतन। मालिक है आत्मा। बुद्धि, मन, इंद्रियां तो उस चेतन के दास हैं, नौकर है। किन्तु आज जिस भूमिका पर खड़े हैं, उसमें सबकुछ चल रहा है। नौकर मालिक बने हुए है और मालिक नौकर। चेतन के अनुशासन में मन, बुद्धि, इंद्रियां नही है। बल्कि बुद्धि, मन, इंद्रियों के अनुशासन में चेतन है। मालिक पर नौकर जब हावी हो जाएं, उस मालिक की क्या हालत हो जाती है। उस स्थिति में मालिक को अगर मकान में रहना है तो नौकरों का नौकर बनकर ही रहना होगा। आज हमारा चेतन भी, बुद्धि, मन और इंद्रियां जो मूलतः उसके नौकर हैं, उनका नौकर बनकर रह रहा है। जो आत्मा चाहती है, बुद्धि मन और इंद्रिया वैसे नहीं करते। जैसा ये चाहते हैं आत्मा को वैसा करना पड़ता है। इसी का नाम है मन और इंद्रियों की गुलामी। और गुलाम को सुख होता ही

कहां है- ***पराधीन सपने सुख नांही।***

मन चेतन का गुलाम कैसे हो, मन पर विजय प्राप्त कैसे हो, इसी प्रश्न का उत्तर है, अभ्यास और वैराग्य, धर्म-शिक्षा-ज्ञान और विवेक। जब भी मन, मन का घोड़ा बेलगाम होकर दौड़े, हम उस पर ज्ञान की लगाम लगाए विवेक का चाबुक लगाएं। इस निरंतर अभ्यास से मन का निग्रह हो सकेगा।

एक बार एक धर्मपरायण राजा के मन में यही जिज्ञासा जगी, उसने अपनी जिज्ञासा अपने गुरूदेव के समक्ष रखी। गुरूदेव ने कहा-आप पूरे राज्य में यह घोषणा करवा दें कि जो एक बकरे को एक दिन के लिए भर-भेट भोजन खिला देगा, उसे एक हजार स्वर्ण मुद्राएं पुरस्कार में दी जायेगी। बकरा राजदरबार से दिया जाएगा। शाम को बकरे की परीक्षा की जाएगी। उस परीक्षा में बकरा अगर कुछ भी खाना न चाहेगा, तब माना जाएगा, बकरे ने भर-पेट भोजन किया है। और भोजन करने वाने वाले को एक सहस्र स्वर्ण मुद्रायें दे दी जाएगी। अगर बकरे ने कुछ खाना चाहा, इसका अर्थ होगा, बकरा अभी भूखा है, तब भोजन करवाने का जिम्मा लेने वाले को दंडित किया जाएगा। राजा ने कहा, गुरूदेव इस घोषणा से मेरी जिज्ञासा का क्या संबंध ? फिर एक हजार स्वर्ण मुद्रा का पुरस्कार, एक बकरे को भर-भेट भोजन कराने का? कुछ समझ में नहीं आया। गुरूदेव बोले-समय पर सबकुछ समझ में आ जाएगा। आप घोषणा करवा दें।

राजा ने घोषणा करवा दी। आकर्षक घोषणा सुनकर स्वर्ण-मुद्राओं के प्रलोभन में अनेक व्यक्ति सामने आए। किन्तु हर किसी को दंडित होना पड़ा। इसका कारण यह नहीं था कि वे उस बकरे को कुछ खिलाते-पिलाते न थे।उसको वे दिन भर खूब डटकर खिलाते पिलाते। किन्तु जब वे उसे राज दरबार में ले जाते, परीक्षा के लिए उसके सामने हरी-हरी दूब लाई जाती। हरी दूब सामने देखते ही, जैसे कि बकरे की आदत होती है, उसे चरने के लिए बकरा अपना मुंह आगे बढ़ा देता। इसका अर्थ होता है कि बकरे का पेट अभी पूरा नहीं भरा है। इस आधार पर पुरस्कार के उम्मीदवार को दंडित होना पड़ता।

अनेक-अनेक उम्मीदवार दंड की चपेट में आ गये। किसी के समझ में नहीं आ रहा था, आखिर रहस्य क्या है? स्वंय राजा भी इस पहेली को नहीं समझ पा रहा था। अन्ततः एक साधारण सा दीखनेवाला व्यक्ति सामने आया। उसने बकरे को भर-पेट भोजन कराने का बीड़ा उठाया। वह बकरे को हरी भरी दूब वाले मैदान में ले गया। हाथ में चाबुक लेकर वह बकरे के पास खड़ा हो गया। बकरा ज्यों ही दूब चरने के लिए मुंह बढ़ाता, वह उसके सर पर जोर से चाबुक मार देता। दिन में पचासों बार ऐसा हुआ। उसने जब

दूब में मुंह डालने की कोशिश की, सड़ाक् से चाबुक उसके सर पर, पीठ पर आ बरसा। भय के मारे बेचारा दूब चरना ही भूल गया।

सांझ हुई। बकरा लेकर वह राजदरबार में उपस्थित हुआ। राजपुरूष परीक्षा के लिए तैयार खड़े थे। उन्होंने बकरे को हरी-भरी दूब दिखाई। चाबुक हाथ में लिए वह भी पास में खड़ा था। बकरे ने हरी दूब से पहले चाबुक की ओर देखा। फिर दूब की तरफ मुंह बढ़ाना तो दूर, उधर से आंखे भी फेर ली। वह परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया। एक सहस्र स्वर्ण मुद्राओं का पुरस्कार उसने जीत लिया।

राजा ने उसे पुरस्कार तो दे दिया, किन्तु मन में सवाल बार-बार उछल रहा था कि इस व्यक्ति ने बकरे को आखिर ऐसा क्या खिलाया कि वह अपनी आदत के एकदम विपरीत, हरी दूब की ओर आंखे उठाकर भी उसने नहीं देखा। प्रश्न भरी नजरों से राजा ने गुरूदेव की ओर देखा। गुरूदेव ने मुस्कराते हुए कहा-इसका रहस्य इसी से पूछो। संकेत पाकर वह व्यक्ति बोला-राजन् सच्चाई यह है, भर-भेट भोजन तो दूर, मैंने इसे आज घास का एक तिनका भी नहीं खिलाया है। यह आज पूरे दिन का उपवासी है।

"फिर इसने हरी दूब खाना क्यों नहीं चाहा ?" राजा ने कहा। इसका कारण यह था, वह बोला, कि दिन में जब-जब भी इसने दूब चरना चाहा, मैंने उसके मुंह पर चाबुक मारा। उस चाबुक के भय से इसने दूब चरना ही छोड़ दिया। यहां पर भी इसने, इसी भय के कारण, दूब की ओर नजर उठाकर नहीं देखा।

सभी सभासद्-गण और राजा भी उसके इस बुद्धि चातुर्य पर आश्चर्यचकित थे। तभी गुरूदेव ने कहा-इस घटना से हमें इस मन के स्वभाव को समझना है। बकरे की तरह है हमारा यह मन । इसे इंद्रिय विषयों की हरी-हरी दूब कितनी ही खिलायें, फिर भी इसका पेट भरता नहीं। आंख को सुंदर से सुंदर कितने ही चेहरे दिखाये, फिर भी कोई सुंदर सलौना मुखड़ा सामने आते ही यह उधर ताका-झांकी करने लग ही जाएगी। कान को मधुर से मधुर कितने ही गीत सुनायें, फिर भी कोई मीठी गीत लहरी सुनते ही वह उधर खिंच जाएगा। नाक को मनोहारी गंध कितनी ही सुंघाई जाए, फिर भी कोई भीनी भीनी महक आते ही नासिका उसे अपने में भरने लगेगी। जीभ को कितने ही सुस्वादु रस चखा दिए जायें, मधुर रस दीखते ही मुंह में पानी भर जाएगा। शरीर को कोमल से कोमल कितने ही स्पर्श मिल जाए, फिर भी कोई कोमल स्पर्श सुलभ होते ही यह शरीर गुदगुदाने लग जाएगा। दिन-रात विषय-चिंतन में ही लगा रहता है। इसकी मांग का कहीं अन्त ही नहीं है-

तन की तृष्णा तनिक है, तीन पाव या सेर।
मन की तृष्णा अमित है, गिले-मेर-का मेर।

तन की भूख तो तीन पाव या एक सेर अन्न से मिट जाती है। किन्तु मन की भू,ख अनंत है, उसे बुझाने में सुमेरू का स्वर्ण-वैभव और कुबेर का खजाना भी छोटा पड़ जाता है। इस तरह ये इंद्रियां और यह मन बकरे की तरह है। इनका पेट भरता ही नहीं है। जब भी आप इस मन-बकरे के सामने विषय दूब को लायेंगे, वह उसे ललचाएगा। वह उस ओर से तभी मुंह मोड़ेगा, जब हर बार उस पर चाबुक लगेगा। वह चाबुक 'अभ्यास और वैराग्य' का होगा, वह चाबुक ज्ञान और विवेक का होगा। गुरूदेव के इस साधना विवेचन से राजा का संशय दूर हो गया,मन का विज्ञान उसके सामने स्पष्ट हो गया।
हमें समझना है -

यह मन
दरिया की उफनी हुई
एक लहर है
जिसमें समाया
एक पूरा शहर-का-शहर है
अमृत मिलता ही है
इस सागर में मंथन से
पर पहले पीना पड़ता
कड़वा हालाहल जहर है

अगर हम उस सत् चित् का आनंद पाना चाहते हैं, तो इस मन जहर को हजम करना सीखना होगा। आत्मा के सागर में छुपे अनमोल मणि-रत्नों को पाने के लिए मन को चंचल लहरों के पार जाना ही होगा। इन चंचल लहरों के पार जाने का साधन श्रीमद्-भगवद् गीता के शब्दों में 'अभ्यास और वैराग्य' है, भगवान महावीर के शब्दों में ज्ञान और विवेक मन के घोड़ें पर अभ्यास का लगाम लगायें और वैराग्य का चाबुक। या मन के इस घोड़े पर श्रुत-रश्मि, ज्ञान की लगाम लगायें और विवेक का चाबुक। तभी हम मन के मालिक बन सकेंगे। अभी हम मन के गुलाम हैं। सारा दुःख इसी का है। हम मन के मालिक बनें, गुलाम नहीं। मंत्र हमें अपने मालिक बनने में शक्ति देगा, सामर्थ्य देगा और हमारे अनंत आनंद और ज्योर्तिमय अस्तित्व का वह द्वार बन जाएगा। मंत्र का यही महान् विज्ञान है।

ये कैसी विडम्बनाएं ?

○ संघप्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री

जिनकी पूजा उन्हीं के गले पर लटक रही है तलवार। आज संसार में सब से ज्यादा पूजा होती है देवियों की। जितने मंदिर देवियों के हैं उतने देवों के भी नहीं है। भगवानों के मंदिर है वे और भी थोड़े तथा वहां सिर्फ अपनी आन्तरिक भक्ति से पूजा उपासना होती है। कोई कामना नहीं। यद्यपि देवी देवताओं की पूजा अपने अपने स्वार्थ के लिए होती है। किसी की किसी के प्रति श्रद्धा होती है, किसी की किसी दूसरी देवी के प्रति आस्था होती है। मात्र नाम का फर्क है शक्ति वही है।

या देवी सर्व भूतेषू, शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नम स्तस्यै नम तस्यै, नम तस्यै नमो नमः ।।

हर देवी शक्ति स्वरूप है। क्या दुर्गा, क्या काली, क्या चामुंडा, क्या भैरवी, क्या करणी, लक्ष्मी, सरस्वती, पद्मावती, कन्याकुमारी, गौरी चक्रेश्वरी, शीतला। एक क्या अनेक देवियों के नाम हमारे ग्रन्थों में आते हैं।

ओम श्री ह्रींश्च घृतिलक्ष्मी, गौरीचंडी संरस्वती
ज्याम्बा विजया नित्या, क्लिनाअजितामददवा
कामांगा कामवाणाच सानन्दा नंद मालिनी
माया मायाविनो रौदी, कला काली कलिप्रिया
एता सर्वा महादेव्यों वर्तन्ते या जगत् त्रये
मह्यं सर्वा प्रयच्छन्तु, कांतिं कीर्तिं घृतिं मतिम्

ये सब देवियां असलियत में देखा जाए तो हमारे अंदर ही हैं। एक तरफ हम कन्याओं में देवियों का निवास मानते हैं। दूसरी तरफ हम कन्याओं की नृशंस हत्याओं से भी बाज नहीं आते। आजकल हरघर परिवार और होस्पीटल में भ्रूहत्या होती है यह क्या है? क्या वे देवी स्वरूपा नहीं है? सारी कन्याओं को खत्म करके क्या हम मानव समाज का भला कर रहे हैं? या मानव जाति के संतुलन को विकृत कर रहे हैं औरतों के बिना अकेले आदमी से क्या मानव जाति चलेगी। ? कन्याओं की हत्या करना यह मातृ शक्ति या मातृि जाति का कितना बड़ा अपमान है।

यौगलिक युग में भी एक लड़का एक लड़की साथ पैदा होते थे। ऋषभदेव के साथ की कन्या थी सुनन्दा है और एक लड़की सुमंगला जिसका साथी विछुड़ गया उसको फिर ऋषभदेव ने अपनाया। यों ही नहीं छोड़ा। जहां भी लड़का या लड़की अकेले रह जाते हैं उनका जीवन बेकार हो जाता है। बिना लड़कियों के लड़कों की क्या कोई जिंदगी होगी? एक तरफ भ्रूंण हत्या वाला सिलसिला है तो दूसरी तरफ दहेज के लालच में आकर बेचारी लड़कियों की जिंदगी के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है शादी होते ही लड़की के मायके

वालों के समक्ष नई मांगे रखना। पूर्ति न होने पर लड़की पर मिट्टी तेल छिड़क कर जलाना या फिर लड़की को बाध्य करना वह खुद ही फांसी पर लटक जाए अथवा जहर खाकर अपनी जान देदे और इसमें लड़के के परिवार वाले सभी शामिल हो जाते हैं। यह है देवियों का सम्मान। यही है हालत गौमाता के बारे में। एक तरफ लोग गौओं की पूजा करते हैं। गायों का दान करते हैं। पंडित लोग अमुक अमुक ग्रहभारी बता देते हैं तो गायों को गुड़ खिलाते हैं। अनाज, चारा देते है। और उन्हीं गायों को कत्ल खाने में भर्ती भी करवाते हैं। कैसा दुरंगा जीवन है ? हिंदुस्तान में नदियों की पूजा का बड़ा रिवाज है। इनको जलदात्री माना जाता है। गंगा, यमुना, सरस्वती का संगम होता है उस समय उसमें लाखों, करोड़ों लोग स्नान करते हैं। इसको बहुत बड़ा पुण्य मानते हैं। नदियों की पूजा करते हैं। जिन नदियों का पानी पवित्र माना है जिनकी पूजा करते हैं, उन्हीं नदियों में बड़े-बड़े महानगरों के गंदे नाले पड़ते हैं, सारे शहर की गंदगी तथा फैक्टिरियों का जहरीला कचरा बहाया जाता है, लावारिश लाशें फैंकते है। मृत बच्चों को बहाते हैं। ऐसी स्थिति में क्या वे नदियां पवित्र रहेगी ? जिस हिमालय या कैलाश से वर्फ पिघल पिघल कर जो नदियां आ रही हैं उनको बीच में इतना गन्दा कर दिया जाता है। उसी जल को हम पवित्र मान कर पूजा पाठ में काम में लेते हैं। यह है हमारी पवित्रता की कसौटी ?

एक आजकल धर्मनेताओं की कतार भी दर्शनीय है। पुराने जमाने में सभी संस्थाओं में, सभी धर्मसंघों में उन प्रमुख लोगों का वर्चस्व रहता था जो त्याग तपस्या करते। समाज के जरूरत मंद लोगों का सहयोग करते। साधुसंतो के लिए पूरी तरह समर्पित होते।उनके मन में शर्म होती कहीं हम से ऐसा काम न हो जाएं, जिससे हमारा नाम बदनाम हो। पहले धार्मिक मंचों पर उन्हीं को स्थान मिलता था जिनका जीवन पवित्र होता और जो परोपकार परायण होते। आज एकदम उल्टा क्रम है जिनके जीवन में चाहे ईमानदारी हो या न हो। चाहे किसी भी तरीके से पैसे कमाए हैं। चाहे जीवन उनका कैसा ही है। कितना ही गंदाखानपान है। कितने ही गरीब लोगों का शोषण करके पैसे कमाए हों लेकिन धर्म स्थानों में करोडो अरबों की बोली में सब से अगवा है। वे सबसे धार्मिक और श्रेष्ठ व्यक्ति माने जाते हैं।

आज के जमाने में अच्छे बुरे की कोई पहचान नहीं है। एक जमाना था अपने बूढ़े बीमार मां बाप की सेवा करने वाले की इज्जत आंकी जाती आजकल धीरे-धीरे हिंदुस्तान में भी विदेशीय संस्कृति आने लग गई। जैसे ही शादी हुई अपने मियां बीवी नया घर बसाते हैं। इतना ही नहीं आज तो बच्चों को छोड़ कर अपनी दूसरी शादी कर लेते हैं। बच्चे लो अनाथाश्रम की शरण। पहले हमारे हिंदुस्तान में शादी एक बार ही होती अब तो बार-बार शादी होती है और तलाक होते हैं। सारे मानदंड ही बदल गए हैं। आखिर कितना पतन होगा इन मानदडों का। कितना ह्रास होगा। इन मूल्यों का ? हमारी नई पीढ़ी को क्या दोष दें ? पुराने लोगों ने भी खान पान कितना बिगाड़ रखा है ?

कहानी

हवाई महल की सनक

○ साध्वी मंजुश्री

बादशाह अकबर ने एक बार अपने बजीर से कहा- बीरबल हम एक हवाई महल बनाना चाहते हैं तुम महल बनवाने की व्यवस्था करो।

बीरबल ने कहा- महाराज हवाई महल बनाने वाले कारीगर अनोखे होते हैं। पहले तो उनकी खोज करनी पड़ेगी फिर और सारी व्यवस्था जुटानी पड़ेगी इस लिए मुझे चार महीने का समय प्रदान करें।

बादशाह ने कहा- ठीक है। मैं तुम्हें आज से चार महीने की छूट्टी देता हूं लेकिन चार माह में एक दिन ज्यादा नहीं लगना चाहिए।

बीरबल ने कहा जो आज्ञा जहांपनाह और सभा से उठ कर चले गये। घर जाकर बीरबल ने एक बहेलिए को बुलवाया। उसे आदेश दिया कि एक माह में 500 तोते पकड़ कर मुझे लाकर दो। और आदेश देकर स्वयं अपने गृह कार्य में लग गया।

एक माह पश्चात बहेलिया पांच सौ तोते लेकर वजीर की सेवा में हाजिर हो गया तत्पश्चात बीरबल ने अपनी पुत्री से कहा- कि तुम इन तोतों को प्रशिक्षित करो। बीरबल की पुत्री ने तोतों को बोलना सिखाया कि ईंट लाओ, चूना लाओ, पानी लाओ और हवाई महल बनाओ। इस तरह से दो माह में तोते प्रशिक्षित हो गये फिर बजीर ने उस स्थान को चुना जहां हवाई महल बनवाना था। स्थान का निर्णय हो जाने पर एक दिन बीरबल सभा में उपस्थित हुआ और बोला- बादशाह! आपके आज्ञानुसार हवाई महल बनाने की सभी तैयारियां पुरी हो चुकी हैं। आप निरीक्षण कर लें तो अच्छा है।

बीरबल की बात को सत्य जानकर बादशाह उसके साथ उस स्थान पर गया जहां महल बनना था। बजीर का संकेत पाकर सभी तोते एक साथ बोलने लगे ''ईंट लाओ, चूना लाओ, पानी लाओ और हवाई महल बनाओ।'' तोतों की आवाज से सारा आसमान गूंज उठा।

बीरबल ने कहा महाराज आकाश में महल का निर्माण करना है तो उसे आकाश में उड़ने वाले पंछी ही कर सकेंगे। यह आदमी के वश का काम तो है नहीं।

बादशाह समझ गया तोतों के बल पर कभी हवाई महल नहीं बन सकता और बादशाह ने अपनी इस सनक को छोड़ दिया।

अध्यात्म

अहिंसा की त्रिवेणी समता, प्रेम और सेवा

अहिंसा सिर्फ निषेधात्मक ही नहीं है। किसी भी प्राणी को नहीं मारना, किसी भी प्राणी को आघात एवं पीड़ा नहीं पहुंचना एवं किसी भी प्राणी का वध न करना, यह अहिंसा का पूर्ण रूप नहीं है। उसका विधेयात्मक रूप भी है और वही महत्वपूर्ण है। श्रमण भगवान महावीर ने आत्म-शांति, विकास एवं अभ्युदय के लिए अहिंसा के तीन विधेयात्मक रूप बताये है'-समता, मैत्री, एवं सेवा।

विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को, प्रत्येक प्राणी को अपनी आत्मा के समान समझना और जागृत मन से हर व्यक्ति के साथ अपने समान व्यवहार करना समता भाव है। यह सामाजिक भावना का मूल आधार है।

जो व्यक्ति परिचय में संपर्क, में आते हैं, उनके साथ विरोध संघर्ष नहीं करना, उनको अपना भाई समझ कर उस से प्रेम करना, सब के साथ सद्-व्यवहार करना, यह मैत्री-भाव का संदेश है।

सेवा की भावना सामाजिक संबंधों की मधुरता एवं आनंद का मूल स्त्रोत है। जहां परस्पर सहयोग का भाव नहीं रहता, वहां सामाजिक संबध मधुर नहीं रह सकते और वातावरण शांत एवं आनंदमय नहीं रह सकता। सेवा के लिए श्रमण भगवान महावीर ने जो सबसे महत्वपूर्ण बात कही, वह यह है-मेरी उपासना से भी अधिक महान् है, किसी रोगी, वृद्ध एवं असहाय की सेवा। जो गिलाण-रोग से पीड़ित की सेवा करता है, वह मेरी ही उपासना करता है। सेवा के द्वारा व्यक्ति अध्यात्म साधना के उच्चतम पद तीर्थंकरत्व को भी प्राप्त कर सकता है।

समता विश्व -शांति का मूल

जीवन की पवित्रता के लिए, आत्म-विकास के लिए व्यक्ति,, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं मानव जाति के अभ्युदय, शांति एवं समृद्धि के लिए अहिंसा का मार्ग ही सही मार्ग है। यह विश्वशांति, जन मंगल एवं लोक अभ्युदय का महामंत्र है।

आज जन जीवन दो धाराओं में विभक्त है-'स्व' और 'पर' एक और स्व है और दूसरी ओर पर है। व्यक्ति एक और स्व को सामने रखकर जीवन यात्रा कर रहा है। वह सोचता है कि सुख समृद्धि, जो कुछ है, वह सब स्व के लिए है। स्व का हित ही सब कुछ है। स्व का सुख-शांति स्व का ऐश्वर्य, सुख साधन ही उसके लिए एकमात्र महत्वपूर्ण है। दूसरी ओर 'पर' है। 'पर' उसके लिए पराया है, बेगाना है। उसमें उसकी कोइ 'अभिरूचि नहीं है। अपने सुख, समृद्धि एवं अभ्युदय के लिए 'पर' का बड़े से बड़ा शोषण

करने में, बलिदान लेने में वह जरा भी नहीं हिचकिचाता है। पर की झोपड़ी में आग लगाकर अपने हाथ सेकने में उसे कोई ग्लानि नहीं होती, प्रत्युत गर्व का अनुभव होता है। इसी धरातल पर आकर स्व और पर के मध्य बहुत बड़ा भेद खड़ा हो जाता है।

मानव जीवन में प्रकृति की ओर से, जो कष्ट पीड़ाएं आती हैं, वे स्वल्प हैं, उनसे संघर्ष करना विशेष कठिन नहीं है। किन्तु अधिकतर कष्ट एवं वेदनाएं स्व और पर के स्वार्थो की टक्कर से पैदा होती है। सिर्फ स्व की समृद्धि के विस्तार की क्षुद्र कामना ही विश्व में दुख, दैन्य, अशांति एवं संघर्ष की मूल जड़ है। क्योंकि व्यक्ति स्व की स्वार्थ पूर्ति हेतू पर के सुख को छीनना शुरू करता है, उसका शोषण करना प्रारंभ करता है। मोह एवं अज्ञान वश अपने क्षुद्र स्वार्थों की कारा में बंद व्यक्ति सत्य को समझ नहीं पाता। वह पर व्यक्ति को एंव उसके हितों को तो अनदेखा कर देता है। परंतु वह इस सत्य का विचार ही नहीं करता, कि जिन पदार्थों एवं भौतिक सुख-साधनों के पीछे पागल बनकर दौड़ रहा है, वे भी तो पर ही है। यहां तक कि यथार्थ में यह शरीर भी तो पर है। आत्म स्वरूप की दृष्टि से देह स्व कहां है ? वह भी पर है। क्योंकि आत्म-ज्योति के पूर्ण विकास में, अभ्युदय में वह भी वाधक है। अतः स्वार्थों की क्षुद्र अंधेरी कोठरी में स्व को बंद कर लेना ही संघर्ष का कारण है।

यदि स्व की अनुभूति को विस्तार दिया जाए, तो व्यक्ति व्यापक बन जाता है। फिर उसके लिए कोई पर रह नहीं जाता । पर में स्वानभूति की चेतना का जागृत होना ही समता है, अहिंसा है। और इस ज्योति के जगते ही संघर्ष समाप्त हो जाते है। जैसा मेरा स्व दुख क्लेश एवं पीड़ाओं से व्याकुल होता, वैसे ही जो व्यक्ति मेरे से भिन्न पर है उसका स्व भी उत्पीड़न एवं दुख से संतप्त होता है। जब तक साधक पर में स्व की अनुभूति नहीं करता, जगत् के सभी प्राणियों को आत्मवत समझने की वृत्ति जागृत नहीं होती, तब तक शोषण, संघर्ष एवं उत्पीड़न की भावना समाप्त नहीं होती, वातावरण दूषित एवं अशांत बना रहता है।

वस्तुतः पाप और हिंसा क्या है? पर की जीवन यात्रा में विघ्न डालने का प्रयत्न करना। यथार्थ में विषमता ही हिंसा है, पाप है। श्रमण भगवान् महावीर से एक शिष्य ने पूछा-भगवन् पापों से मुक्त कैसे हो सकते हैं? पाप से निवृत्ति का मार्ग क्या है ? श्रमण भगवान् महावीर ने जीवन-यात्रा को निष्पाप बनाने के लिए दिव्य दृष्टि दी। कर्म में भी अकर्म का बोध दिया-

सव्वभूयप्पभूयस्स सम्मं भूयाई पासओ।
पिहिया सव्वस्स दंतस्स पावकम्मं न बंधई।।

जो विश्व के समस्त प्राणियों को आत्म भाव से देखता है, जिसकी दृष्टि सम है, जो प्रत्येक आत्मा में अखंड चैतन्य ज्योति का दर्शन करता है, जिसने आस्त्रव के द्वार रोक दिये हैं,

उस साधक को कर्म करते हुए भी पाप कर्म का बंध नहीं होता। पापो से, दोषों से, दुष्कमा से मुक्त होने का यह सही मार्ग है। कुछ लोग कहते हैं-अमुक तरह का किया कांड कर लो, अमुक देवता की मनौती कर लो, गंगा में गोता लगा लो, अमुक देवी को बलि चढ़ा दो, पंड़ितों को कुछ दक्षिणा दे दो, बस पापों से मुक्ति हो जाएगी।

मैं समझता हूं, यह अपने आपसे आंखमिचौनी का खेल है। पापों से न कोई देवी शक्ति छुटकारा दिला सकती है, न कोई किया काण्ड, न पण्डे पुजारी और तो क्या, स्वंय ईश्वर भी मनुष्य को पाप कर्म से मुक्त नहीं कर सकता।

मैंने एक बार एक मुस्लिम शायर की शायरी सुनी। वह उंचे स्वर में मस्ती में गा रहा था। उस का भाव था। है मुहम्मद! मैं गुनाह कर रहा हूं, क्योंकि मुझे तेरे पर भरोसा है। खुदा के यहां तू मुझे खड़ा मिलेगा और मेरे सब गुनाह माफ करवा देगा।''

इसे सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। इस तरह की कल्पनाएं तो संसार में बुराई, अन्याय, अत्याचार एवं दुष्कर्म को प्रोत्साहन देती हैं। हजारों हजार गुनाह करके, जीवन भर पाप एवं दुष्कर्म कर के एक दो घड़ी भगवान् की प्रार्थना कर ली, नमाज पढ़ ली कि सब गुनाह और पाप माफ हो गए। भगवान से कितना सस्ता सौदा कर रखा है मनुष्य ने।

भारत का अध्यात्मवादी दर्शन एवं चिंतन कहता है-उपासना की यह पद्धति गलत क्षमादान का यह मिथ्या विश्वास तुम्हें संसार में भटकाता रहा है। क्या प्रकाश की मनौती कर लेने मात्र से, दीपक की आरती उतार लेने मात्र से कभी अंधेरा दूर हुआ है ? अंधरे को दूर करने के लिए दीपक प्रज्वलित करना होगा। जब अन्तर्मन में अहिंसा, मैत्री का, समता का, सत्य का दीपक, प्रज्वलित होगा, तभी पापों का अंधेरा दूर होगा।

लोग परमात्मा के दर्शन की बात करते है। मैं कहता हूं-जब तक आत्म दर्शन नहीं होगा, तब तक परमात्म दर्शन कैसे होगा? प्राणी मात्र के प्रति हमारी दृष्टि स्व की होनी चाहिए। जो मेरा सुख है वहीं सब का सुख है जो सब का सुख है वही मेरा सुख है। यही आत्म दृष्टि है। इस ज्योतिर्मय दृष्टि के जगते ही दूसरे प्राणियों को पीड़ा देने की वृत्ति समाप्त हो जाती है। इस स्वभाव दृष्टि में द्वैत नहीं रहता, कोई पराया नहीं रहता। अतः भय भी नहीं होता है, अपने से कभी भय नहीं होता-'***द्वितीयाद् वै भयं भवति।''***मन के आकाश में भय के बादल तब गहराते हैं, जब आप को लगता है, यहां कोई 'पर' है, दूसरा है। पर की कल्पना से ही भय होता है। श्रमण भगवान् महावीर ने कहा है आतम-के लिए आत्म पर नहीं होता, दूसरा नहीं होता। आत्मा एक ही है-***एगे आया।*** यह अखंड चैतन्य की दृष्टि है, अद्वैत भावना है। अद्वैत की इसी भूमिका पर हिंसा, असत्य से विरत होकर आत्मा अहिंसा एवं सत्य से, समता से अनुप्राणित होता है। यही अध्यात्म दृष्टि है।

-शेष अगले अंक में

परोपकार का नाम है वास्तविक जीवन

○ श्री मिश्रीलाल जैन

भारतीय समाज जर्जर हो गया है। स्वतंत्रता के सूर्योदय के साथ उसने सामाजिक, आर्थिक, नैतिक अभ्युत्थान के जो स्वर्णीम सपने अपनी आंखों में बसाए थे वे बिखर चुके हैं। प्राचीन संस्कृति सांस तोड रही है। समाज पाश्चात्य सभ्यता के अंधे अनुसरण में व्यस्त है। पाश्चात्य सभ्यता भौतिक प्रवृत्तियों के आधार पर विकसित हुई है और भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक सिद्धांतों के आधार पर, इस कारण पाश्चात्य सभ्यता से उसका समन्वय नहीं हो पा रहा है। भारतीय संस्कृति संक्रामक काल से गुजर रही है। वैज्ञानिको के सृजक हाथ अणु-हाईड्रोजन जैसे विनाशक अस्त्र शस्त्रों के निर्माण में व्यस्त हैं। यद्यपि वैज्ञानिक शोधों ने मानव हृदय में जमी हुई अंध विश्वासों की पर्तों को दूर करने का सम्यक् कार्य किया है, कहने का विश्व के राष्ट्र एक दूसरे के निकट आ गए हैं, किन्तु अनवरत युद्धों ने विश्व में घृणा और द्वेष फैलाने का दुर्भाग्यपूर्ण कार्य किया है।

वस्तुओं के मूल्य, मुद्रा का अत्यधिक प्रसार दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। व्यक्ति का मूल्य प्रतिक्षण घट रहा है। संसार में सब से कोई मूल्य रहित है तो श्रेष्ठ और मूल्यवान मानव! नैतिकता जिस स्तर पर आ गई है उसे देखकर सहज ही कहा जा सकता है कि मानवीय मूल्यों के दृष्टिकोण से भारतीय समाज का नैतिक का स्तर निम्नतर स्तर पर आ गया है। भ्रष्टाचार, संचय की दूषित प्रवृत्ति, अनैतिकता भारतीय जन-जीवन का अंग बन गई है। सट्टा एवं लाटारियों के प्रचार प्रसार ने मनुष्य को पुरूषार्थवादी बनाने की अपेक्षा निष्क्रिय और भाग्यवादी बनाने में योगदान दिया है। वर्तमान समाज परिवर्तन की प्रतीक्षा में है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है।

तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर की विचारधारा प्रत्येक बदलते मूल्यों और संदर्भों में पूर्ण और उपयोगी है। महावीर ने दीर्घ काल तक सतत साधना द्वारा सर्वज्ञता प्राप्त की थी। उनके आत्म-ज्ञान में प्रत्येक परिवर्तन परिलक्षित होता था। उनके सिद्धांत शाश्वत हैं। उन्हें देश-काल की सीमा में बद्ध नहीं किया जा सकता। वर्धमान की विचारधारा नवीन समाज-निर्वाण में सार्वधिक उपयोगी है।

वर्तमान युग व्यक्तिवादी होता जा रहा है। समाज और राष्ट्र के प्रति उसे अपने दायित्वों का बोध नहीं रहा। महावीर की विचारधारा इस दूषित प्रकृति से विमुख होने का आश्वासन

प्रदान करती है। तीर्थंकर महावीर ने 'जिओ और जीने दो' एवं ''परस्परोपग्रहो जीवानाम्'' जैसे मंगल संदेश दिए। इन संदेशों में स्व-पर के समान अस्तित्व की कामना है। परस्पर शुभ कामना करते हुए जीवन व्यतीत करना ही वास्तविक जीवन है। समाज में सभी के समान अस्तित्व का आश्वासन हो और सभी परस्पर सुख-दुःखों में सहभागीदार हों इससे अधिक स्वस्थ समाज और समाजवाद की स्थापना की कल्पना भी संभव नहीं हो सकती। इन दोनों सूत्रों में यह संदेश निहित है कि दूसरे के अस्तित्व को स्वंय के अस्तित्व के समान स्वीकार करो। परिग्रह से बचो, अत्यधिक संचय की दूषित प्रवृत्ति व्यक्ति की मानसिक चेतना को कुंठित कर देती है। सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन में अरूचि उत्पन्न कर देती है। वह व्यक्ति और समाज दोनों के लिए ही घातक है इसलिए महावीर ने दान का उपदेश दिया। जब तक समाज की मनोवृत्ति में परिवर्तन नहीं आयेगा, समस्त प्रक्रियाएं निष्फल होंगी।

तीर्थंकर की विचारधारा ने हिंसा को सामजिक जीवन से निष्कासित कर दिया था, किन्तु भौतिकवादी युग के प्रत्येक चरण के साथ हिंसा की असत् प्रवृत्ति समाज में पुनः व्याप्त हो गई। युद्धों की विभीषिका के अतिरिक्त सामान्य जनजीवन भी असुरक्षित हो गया है। मांसाहारी प्रवृत्ति का प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। मांस-मंदिरा के निरंतर प्रयोग के कारण मनुष्य स्वस्थ जीवन व्यतीत नहीं कर पा रहा है। मांस का प्रयोग शारीरिक एवं मानसिक विकृतियों का जनक है। तीर्थंकर महावीर की दिव्य वाणी से अमृत-छंद निःसृत हुए। उन्होंने कहा कि स्वंय की सांसो के प्रति सभी ममता रखते हैं, अपने जीवन को सभी सुरक्षित रखना चाहते हैं, फिर दूसरे की सांसों को, जीवन को समाप्त करने का दुराग्रह क्यों? समाज में अहिंसा की प्राण-प्रतिष्ठा करते हेतु प्रभु ने यहां तक कहा-आचार्य समंतभ्रद के शब्दों में-'अहिंसा भूतानां जगति विदितं परमब्रह्म।'' अर्थात् अहिंसा में साक्षात् परमेश्वर का निवास है। स्पष्ट है कि तीर्थंकर महावीर ने मानव हृदय में निवास करने वाली सत्-असत् प्रवृत्तियों के अध्ययन के पश्चात् ही अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया था। प्रकृति की समस्त प्रक्रियाओं में अहिंसा व्याप्त है। मां के अधरों पर जन्मी लोरियां, पराए दुःखों में द्रवित नेत्र इसके स्वंय साक्षी है। इसलिए सुखद समाज की रचना जिनवाणी के शरण सेवन में ही निहित है।

प्रत्येक व्यक्ति सिक्के के उस पहलू को देखता है, जिसमें उसका स्वार्थ निहित हो, उस पृष्ठ को पढ़ता है, जिसमें उसका स्वार्थ अंकित हो, किन्तु भगवान महावीर ने स्याद्वाद की दृष्टि में वस्तु को समझकर आचरण करने का मंगल उपदेश दिया। संसार में अनेक विषमताओं का कारण दूसरे की दृष्टि को न समझते हुए आचरण करना है।

स्याद्वाद जीने की कला है, सत्य तक पहुंचने का अचूक साधन है, दृष्टि निर्मल करने की औषधि है। विश्व में आदर्श समाज की स्थापना करनी है तो स्याद्वाद के सिद्धांतों को जीवन में उतारना होगा, क्योंकि स्याद्वाद पूर्णदर्शी है। और परस्पर विरोधों का परिहार करके समन्वयवादी दृष्टिकोण का सृजन करता है। वह विचारों को शुद्धि प्रदान कर मनुष्य के मस्तिष्क में से हठपूर्ण विचारों को दूर करके शुद्ध एवं सत्य विचारों के लिए प्रत्येक मानव का आह्वान करता है और यथार्थ दृष्टि का निर्माण सुखी और समाजवादी समाज के निर्माण की मौलिक आवश्यकता है।

सुख एक मनः स्थिति है। सुख की कोई परिभाषा निश्चित करना संभव नहीं है। किंतु इतना निर्विवाद रूप से प्रमाणित है कि जो स्वतंत्र है वह सुखी है। व्यक्ति की स्वतंत्रता पर भगवान महावीर ने सबसे अधिक जोर दिया। उनके संदेशों का सार है-'पराधीन रहकर जीवन बिताने से मृत्यु श्रेष्ठ है।'' इस सिद्धांत का तीर्थंकर वाणी में चरम विकास मिलता है। जन्म-मृत्यु के बंधन भी एक प्रकार की परतंत्रता है इसलिए विकारी प्रवृत्तियों के विसर्जन हेतु सम्यक् दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक् चारित्र को आचरण में उतारने का मंगल उपदेश दिया। आध्यात्मिक दृष्टि से इसका जितना महत्व है, उतना ही सामाजिक दृष्टि से। सामाजिक विषमताओं का मुख्य कारण है-व्यक्तियों की दूषित विचारधारा, अज्ञानता और आचरण में शिथिलाचार। यदि प्रत्येक व्यक्ति दर्शन, ज्ञान, चरित्र की त्रिवेणी का सेवन करे तभी भारत में, विश्व में हम आदर्श समाज की स्थापना को साकार देख सकते हैं। प्रत्येक राष्ट्र जनता की अज्ञानता को दूर करने के लिए सबसे अधिक व्यय शिक्षा पर करता है ताकि जनता में ज्ञान का विकास हो और स्वस्थ दृष्टिकोण बने, सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुकूल समाज का आचरण हो और इस प्रकार आचरणों को नियंत्रित करने हेतु अनेक कानून-कायदे प्रत्येक देश में प्रचलित हैं, परंतु इनका परिपालन एक समस्या बना हुआ है। कारण, मनुष्य की स्वार्थी बुद्धि कही न कहीं इन वैधानिक प्रावधानों से बचने के उपाय खोजती रहती है। वैधानिक प्रावधानों के पालन के वास्तविक समाधान की ओर गंभीरता पूर्वक विचार ही नहीं किया जाता। मनुष्य का हृदय सत्-असत् प्रवृत्तियों का अद्भुत संगम है। धर्म, मानव का असत् प्रवृत्तियों को नष्ट करने वाला सबसे प्रभावक सत्य है। किन्तु विज्ञान की चकाचौंध, धर्म को प्रति-क्षण मनुष्य के हृदय से दूर करती जा रही है। मनुष्य का जीवन भौतिक सुखों की उपलब्धियां खोजने वाला यंत्र मात्र बन गया है, उसका भावात्मक पहलू प्रतिक्षण टूट रहा है। यदि यही स्थिति रही तो मनुष्य यंत्र-मात्र बनकर रह जाएगा। इसलिए सुखी समाज की रचना के लिए उसे तीर्थंकर महावीर के सिद्धांतों के

अनुरूप ढालना सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र की प्रतिष्ठा करनी होगी। व्यक्तियों की इकाई की संयुक्ति विश्व है। बूंद-बूंद की संयुक्ति सागर है। इसलिए आदर्श समाज की रचना हेतु व्यक्ति का हित देखना होगा, उसका श्रृंगार करना होगा। मानव-मात्र का मंगलमय भविष्य ही नवीन समाज का स्वरूप हो सकता है। वर्द्धमान महावीर की विचार धारा वास्तव में प्रत्येक युग के लिए मूल्यवान दस्तावेज है।

भगवान महावीर के छबबीस सौ वर्ष पूर्व के उपदेश ऐसे प्रतीत होते हैं, मानों वर्तमान युग के लिए भविष्य-वाणी हों। तीर्थंकर महावीर ने कहा था-जाति और कुल के बंधन कृत्रिम हैं। जिसका आचरण आदर्श हो, वही श्रेष्ठ है। श्रेष्ठता जन्म की कसौटी पर नहीं प्रमाणित होनी चाहिए। सभी प्राणियों में समान आत्माएं हैं। वे मात्र कर्मों के कारण पृथक-पृथक् गतियों में भ्रमण कर रही हैं। प्रत्येक व्यक्ति में परमात्मा बनने की शक्ति निहित है, जिसे क्रमशः भावनाओं और आचरण की विशुद्धि से ही उपलब्ध किया जा सकता है। तीर्थंकर ने प्रत्येक व्यक्ति के लिए ऐसा पुनीत गंतव्य निश्चित किया। यदि प्रत्येक व्यक्ति अथवा समाज का बहुमत इस पुनीत गंतव्य को अपना लक्ष्य बना ले तो आदर्श समाज की स्थापना सहज और संभव है।

तीर्थंकर महावीर की विचार धारा का मूल उद्देश्य परमात्म-तत्व की उपलब्धि का मार्ग है। उनकी विचारधारा निवृत्तिमूलक है, किन्तु आत्म-कल्याण, लोक-कल्याण एक सीमा तक साथ-साथ चलते हैं। इसीलिए महावीर ने अपनी विचारधारा को स्याद्वाद में व्यक्त किया और परमात्म-तत्व की उपलब्धि ही जिनका एक मात्र साधन है, ऐसे साधु की एवं गृहस्थ जीवन में रहकर भी धर्म- साधना कर सकें, ऐसे व्यक्तियों की आचार-संहिता पृथक्-पृथक् निर्धारित की। आदर्श समाज के व्यक्ति का आचरण कैसा हो, इसलिए व्यक्ति की दिनचर्या तक नियत कर दी।

देव-दर्शन, गुरू-उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप, और दान ये दैनिक षटकर्म प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक माने गए हैं। इन छः कार्यों से अनेक समस्याओं का समाधान निहित है। व्यक्ति की आध्यात्मिक, मानसिक एवं नैतिक चेतना का यह मंगल सूत्र है। इसमें व्यक्ति को आदर्श बनाने की अपार क्षमता है। व्यक्ति के आचरण को आदर्श बनाए बिना आदर्श समाज की कामना, मात्र कल्पना है। अतएव कहा जा सकता है कि नवीन समाज-रचना का मंगल भविष्य, तीर्थंकर-वाणी में निहित है।

कहानी

जाकी रही भावना जैसी

○ साध्वी समताश्री

भगवान महावीर फरमाते है जैसी तुम्हारी भावना है वैसा ही तुम्हें परिणाम मिलेगा। जैसी तुम्हारी मन की चाहत है वैसी ही चीज तुम्हें मिलेगी। बाहर की किसी भी वस्तु में न तो बंधन है न मोक्ष है। बंधन और मुक्ति दोनों मनुष्य के मन के अंदर है ''परिणामे बंधो परिणामे मोक्खो,'' किसी के लिए कोई वस्तु आनंददायक है तो किसी कि लिए वही वस्तु कष्टदायक। किसी के लिए घी अमृत है तो किसी के लिए विष। किसी के लिए धूप जीवन दायिनी है तो किसी के लिए कष्ट दायिनी है। किसी को महफिल में राग रंग देखना पसंद है तो किसी को पर्वत या गुफा का एकाकी जीवन वस्तु तो वस्तु है। स्थान तो स्थान है। वह न अच्छा है न बुरा। बंधन का कारण वस्तु नहीं मन की भावना है।

कहीं रावण को जलाया जाता है तो कहीं उसकी पूजा भी होती है। कोई महात्मा गांधी को राष्ट्रपिता कहकर सम्मान देता है तो कोई उन्हें दुश्मन समझकर गोली भी मार देता है। किसी को हम भारत वासी आतंकवादी कहते हैं तो कोई उन्हें शहीद बताता है। सद्दाम हुसैन के अनुयायी उसे शहीद बता रहे हैं तो किसी ने उसे क्रूर हिंसक आक्रांता कहकर फांसी पर चढ़ा दिया। किसी के लिए कोई एक व्यक्ति प्रिय है, सम्मानीय है। पूज्य है जो किसी के लिए आक्रांता है, आततायी है, क्रूर है। उसी तरह वस्तु है वह किसी के लिए अच्छी है तो किसी के लिए बुरी है। वस्तु तो वस्तु है, व्यक्ति तो व्यक्ति है। बस लेने वाले का नजरिया अलग है। सोचने वाले की सोच अलग है। ठीक उसी तरह हमारा मन जब राग द्वेष के बंधन में बंध जाता है तो वह संसार में भ्रमण करता रहता है। चौरासी लाख जीव योनि में नाना प्रकार के कष्टों से पीड़ित होता रहता है। और जब वह राग द्वेष के बंधन से ऊपर उठकर रागद्वेष की जंजीरो को तोड़कर बाहर निकल जाता है। तो वह निर्वाण को प्राप्त हो जाता है। मुक्त हो जाता है।

भगवान महावीर ने मोक्ष प्राप्त करने के चार सूत्र बताये है। दान, शील, तप और भावना। भावना ऐसा सूत्र है जिसके लिए न तो हमें तप करने की जरूरत है, न हमें धन खर्च करने की जरूरत है। और न समय नष्ट करने की जरूरत है। इसे तो प्रतिपल जीने की जरूरत है। प्रतिपल पवित्र रखने की जरूरत है। 'मन में ही है नरक भयंकर मन में स्वर्ग सुहाना''। पूज्य गुरूदेव श्री के शब्दों ने यहां स्पष्ट कर दिया है कि मन की पवित्र भावना ही स्वर्ग है और कलुषित भावना नरक। भावना भव-बंधन का नाश करने वाली है तो भव-वर्धन करने वाली भी भावना ही है। निम्न दृष्टांत से हम इसे समझ सकते हैं।

नगर के बाहर बरगद के वृक्ष के नीचे एक संत रहते थे। सदा ध्यान में तल्लीन रहना, राम नाम का जप करना, आने जाने वाले भक्तों को उपदेश देना उनका नित्य क्रम था। शहर के लोग संत के स्वभाव और प्रभु भक्ती को देखकर उनसे खास प्रभावित थे। सबने मिलकर संत के लिए एक आश्रम बनवा दिया। आश्रम में एक गाय बंधवा दी। फलों के वृक्ष लगवा दिये। सत्संग प्रवचन के लिए एक हौल बनवा दिया। सुबह से शाम तक लोगों का आवागमन लगा रहता था, राम नाम का कीर्तन सतत चलता रहता था।

आश्रम से कुछ ही दूरी पर एक शिकारी टूटी फूटी झोपड़ी में रहता था। वह सुबह निकलता छोटा मोटा शिकार करके लाता और उसी से संतुष्ट होकर महात्मा जी का उपदेश सुनता रहता उसका आश्रम में तो प्रवेश वर्जित था ही। आश्रम के इर्द-गिर्द भी घूमना संत को बर्दास्त नहीं होता था। संत ने कई बार अपने भक्तों से कहा भी कि यह शिकारी हमारे आस पास के वातावरण को दूषित करता है अतः इसे यहां से हटा दिया जाये।

भक्तजनों ने शिकारी से कहा कि तुम आश्रम से दूर चले जाओ। शिकारी ने कहा-'मैं आपके आश्रम के आस पास नहीं फटकूंगा। कृपया मुझे अपने झोपड़ें में रहने दो।

समय बीतता गया। शिकारी संत के उपदेशों को सुन सुनकर अपने को धिक्कारता रहता। कभी-कभी तो पकड़े हुए शिकार को छोड़ देता और भूखा ही सो जाता। मन ही मन संत को धन्यवाद देता रहता कि इनकी कृपा से मेरे कानों में रामनाम का कीर्तन सुनाई देता रहता है। संत कितने महान् है। मैं दुष्टात्मा हूं। तभी तो आश्रम में नहीं जा पाता हूं। प्रभु मुझे माफ करना।

इधर संत रामनाम का जप तो बहुत करते पर मन ही मन शिकारी को कोशते रहते कि प्रातःकाल उठते ही इस दुष्टात्मा के दर्शन हो जाते हैं। इसके यहां रहने से मेरी साधना में खलल पड़ता है। यह मरता भी नहीं है। आदि..आदि।

कुछ समय पश्चात् एक बार संत बीमार हो गये। धीरे-धीरे उन्होंने खाना पीना भी छोड़ दिया। भक्त जनों ने खूब सेवा की पर एक दिन संत ने नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। ठीक उसी समय उस शिकारी ने भी अपने प्राणों का त्याग कर दिया।

संयोग की बात संत की आत्मा तथा शिकारी की आत्मा दोनों एक साथ धर्मराज के सामने पहुंची। धर्मराज ने अपनी दिव्य दृष्टि से जाना कि किस आत्मा को कहां भेजना है। संत की आत्मा को स्वर्ग और शिकारी की आत्मा को नरक में भेजना है। लेकिन धर्मराज ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने शिकारी को स्वर्ग तथा संत को नरक में भेज दिया। इस निर्णय का संत की आत्मा ने विरोध किया, और कहा आप मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं। लेकिन

धर्मराज ने अपने फैसले को बरकरार रखते हुए कहा-शांत रहो मुनिवर! धर्मराज के यहां कभी अन्याय नहीं होता। यहां पर किसी भी आत्मा के भावी जीवन का निर्णय उसकी आंतरिक वृत्तियों से होता है। संसार में तो उसके बाहरी कर्मों को देखा जाता है लेकिन मेरे यहां मन की भावना को देखा जाता है। आप संत होते हुए भी शिकारी के प्रति वैरभाव रखते थे। घृणा करते थे उसके जीवन से नफरत करते थे उसके दर्शन को पाप समझते थे। लेकिन वह बेचारा। रात दिन आपका गुणगान करता था। आपका आदर करता था। शिकार करते हुए भी उसके मन में प्राणयों के प्रति दया के भाव थे। उसी भावना का परिणाम है कि आज उसे स्वर्ग मिल रहा है। और आपको नरक। मुनिवर आप तन से संत थे और यह शिकारी मन से संत था।

चांद धरती पर

राजा भोज के दरबार में एक कुम्हारिन आयी। राजा ने आने का कारण पूछा। उसने कहा- जंगल में मिट्टी खोदते मेरे पति को मणियों से भरा घड़ा मिला है। उस धन के आप ही मालिक हैं। अब आप मंगवा लें। राजा के बुलाने पर कुम्हार घड़ा लेकर आया। राजा मणियों को देखकर बहुत खुश हुआ और पूछा। ये सब क्या हैं ? वह बहुत चतुर था। उसने कहा- ये आकाश के तारे हैं।

राजा बोला, 'धरती पर कैसे आ गये। कुम्हार ने उत्तर दिया, ''जब आकाश का चांद धरती पर आ गया है। तब ये तारे पीछे कैसे रह सकते थे ?'' कुम्हार ने राजा को चांदसे उपमित करके प्रसन्न कर लिया। राजा ने मणियों का घड़ा इनाम में कुम्हार को दे दिया। यह तरीका होता है बोलने का। एक अनपढ़ कुम्हार होते हुए भी इतनी बुद्धिमता। वरना बड़े बड़े पढ़े लिखें लोगों में भी बोलने का सलीका नहीं होता। डिग्री की पढ़ाई से भी ज्यादा महत्व रखता है अंतर का ज्ञान।

✦✦✦

मुंहासे का इलाज

○ अरूण तिवारी ''योगाचार्य''

युवावस्था में सभी लड़के-लड़कियों को मुंहासे होते हैं, कुछ लोगों को ज्यादा मुंहासे होते हैं और उनका चेहरा बिगड़ जाता है।

कुछ लोग मुंहासों को फोड़ देते हैं तो ये और ज्यादा खराब हो जाते हैं तथा त्वचा पर दाग छोड़ देते हैं। इनका सर्व प्रथम इलाज तो यह है कि इन्हें फोड़ें नहीं, अपने आप ठीक होने दें।

मुंहासे होने का कारण एक प्रकार का हारमोन है। महिलाओं में एंडोजेन नामक हारमोन होता है। जो बिसियस ग्रंथि को उत्तेजित करता है, यह ग्रंथि सेबम नामक तेल बनाती है, यही तेल मुंहासों का निर्माण करता है।

मुंहासों के विभिन्न प्रकारः

1.हैड्सः- मुंहासों का मुख्य कारण है। यह दो प्रकार के हो सकते हैं ब्लैक हैड्स और व्हाइट हैड्स।
2. फुंसीः- त्वचा के रंग से मिलता जुलता हल्का से उभरा हुआ भाग।
3. पकी हुई फुंसीः- मवाद से भरा हुआ उभरा भाग।
4. सिस्टः-गाढ़े पदार्थ से भरा हुआ एक बड़ा गोल आकार का उभरा भाग।
5. निशानः- उपर दी गई सभी चीजों के ठीक होने के बाद भी कई निशान छूट जाते हैं।

मुंहासे का प्राकृतिक उपचारः

1.दिन में तीन चार बार कच्चे लहसुन की पीठी बनाकार लगाने से मुंहासे कम हो जाते हैं और काले निशान तथा फुन्सियां मिटने मे सहायता मिलती है।
2. लहसुन की दो चार कली प्रति दिन खाएं इससे रक्त शुद्ध होता है।
3. नींबू का रस गुनगुने पानी में मिलाकर दिन में तीन बार मुंह धोएं।
4. मैथी की पत्तियों का पेस्ट बनाकार प्रतिदिन चेहरे पर दस से पन्द्रह मिनट लगाएं।
5. नारियल का पानी पीएं।
6. लौंग और जीरे का लेप बनाकर चेहरे पर लगाएं।
7. चेहरे पर प्रतिदिन दो बार नहाने से पहले दस मिनट तक हल्दी का लेप लगाएं।
8. कब्ज न होने दे।
9. संतुलित आहार ग्रहण करें। तनाव से बचें।
10. प्रातः उषा-पान करें।
11. प्राणायाम का नियमित अभ्यास करें।

नवकार मंत्र है नमता की शक्ति

मंत्र जीवन का रहस्य होते हैं। इनका संबंध मन से होता है। आत्मशुद्धि मंत्र, मन में मंथन का ही परिणाम है। मन की सोई हुई शक्ति से मंत्र हमें परिचित कराते हैं और उन्हें जगाते हैं, इसीलिए वे असिद्ध को भी सिद्ध कर देते हैं। इसीलिए वे हमारे मनोरथ को पूरा करते हैं। सामान्य मंत्रों की महिमा और शक्ति से बड़ी महिमा वाले मंत्र को महामंत्र कहा जाता है। उसकी शक्ति को शब्दों में परिभाषित करना कठिन है। महामंत्र हमारी चेतना की गति को परिवर्तित करते हैं।

जैन धर्म में नवकार मंत्र को महामंत्र की श्रेणी में रखा गया है। इसके मंत्र राग या विराग नहीं, बल्कि साधक को वीतराग की ओर ले जाते हैं। जिस प्रकार वैष्णव धर्म में गायत्री मंत्र की एंव बौद्ध धर्म में त्रिसरण या त्रिराम मंत्र की महत्ता है, उसी प्रकार जैन धर्म में णमोकार महामंत्र की अत्यं महत्ता है। जैन धर्म के अनुसार सभी देवों में श्री वीतराग देव को, सभी तीर्थों में श्री शत्रुजय तीर्थ को और सभी मंत्रों में नवकार मंत्र को श्रेष्ठ माना गया है।

नवकार मंत्र का प्रथम शब्द णमो है, जिसका अर्थ है नम जाओ। जो नमता है वही गुणों में रमता है और वही प्रभु को गमता है यानी प्रभु तक पहुंचता है। णमो शब्द का भावार्थ है अहंकार छोड़ो। इस नवकार मंत्र में कुल नौ पद हैं, इसीलिए इसे नवकार कहा जाता है। लेकिन नवकार का एक आशय नमस्कार भी है, इसलिए इने नमस्कार मंत्र, महासूत्र या परमेष्ठि आदि नामों से भी जाना जाता है।

इसके नौ सूत्रों का अर्थ इस प्रकार है, मैं अरिहंतों को नमस्कार करता हूं, सिद्धों को नमस्कार करता हूं, और लोक के सब साधुओं को नमस्कार करता हूं। अरिहंत भगवान को नमस्कार करने से कर्म शत्रु को परास्त करने की सिद्धि भगवान को नमस्कार करने से देहभाव को छोड़ने की, आचार्य को नमस्कार करने से अनुचित आचरण को छोड़ने की, उपाध्याय को नमस्कार करने से मिथ्या मान्यता को छोड़ने की तथा साधु जन को नमस्कर करने से संसार की ममता छोड़ने की प्रेरणा मिलती है। इस महासूत्र की विशेषता यह है कि यह अहंकार का विसर्जन करता है। इसमें व्यक्ति की पूजा नहीं, बल्कि गुरू की पूजा है। इसमें व्यक्ति को नहीं, व्यक्तित्व को नमस्कार किया जाता है। इसमें परंपरा को नहीं, जो परम है उसकी प्रतिष्ठा की गई है। इसमें ज्ञान दर्शन और चरित्र को मान दिया गया है। इन्हीं कारणों से नवकार मंत्र को अन्य मंत्रों से श्रेष्ठ माना गया है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह कामना पूर्ति का नहीं, बल्कि कामनाओं को शांत करने वाला महामंत्र है।

○प्रस्तुति- किरण तिवारी

मासिक राशि भविष्यफल, मार्च-2007

डॉ. एन. पी. मित्तल,पलवल

मेष:- मेष राशि के जतकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह माध्यम फलदायक रहेगा। इस माह के उत्तरार्ध में व्ययाधिक्य की संभावना है। कुछ जातकों को वाहन के क्रय विक्रय से लाभ होगा। परिवार जनों में सामन्जस्य बनाए रखने के लिये प्रयास करना पड़ेगा। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह सामान्यतया अच्छा ही रहेगा। किसी कारण थकान आदि की संभावना को नकारा नहीं जा सकता।

वृष- वृष राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह भागदौड़ के चलते शुभ फल दायक है। कोई नवीन योजना भी सिरे चढ़ सकती है। मन उत्साह से परिपूर्ण रहेगा। आपके किये हुए परिश्रम सार्थक होंगे। परिवार जनों में सामन्जस्य बना रहेगा। घर-परिवार में कोई मांगलिक कार्य भी संभावित है। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह अच्छा है लेकिन आलस्य का त्याग करें।

मिथुन- मिथुन राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभफल दायक है। परिश्रम सार्थक सिद्ध होगा। परिवार जनों में सामन्जस्य बना रहेगा। छोटी बडी यात्राएं के योग बनेंगे। वाहन सावधानी से चलाएं। शत्रु सिर उठायेंगे किन्तु मुंह की खाएंगे। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह सामान्यतया अच्छा ही कहा जाएगा। कुछ दिनों के लिये कोई मौसमी बीमारी तंग कर सकती है।

कर्क- कर्क राशि के जातकों के लिए व्यापार व्यवसाय की दृष्टि से यह माह गुजारे लायक ही कहा जाएगा। आय-व्यय की निरन्तरता आपकी मानसिक आर्थिके स्थिति को प्रभावित करेगी। किसी नये कार्य की योजना तो बन सकती है किन्तु उसका क्रियान्वयन नहीं हो पाएगा। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह सामान्यतया अच्छा रहेगा। पैरों की किसी तकलीफ को न कारा नहीं जा सकता किन्तु वह अस्थाई होगी।

सिंह- सिंह राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अवरोधों के चलते अर्थ प्राप्ति कराने वाला है। पारिवारिक सामन्जस्य बना रहेगा। पत्नी के स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। उसकी सलाह आपकी नई योजनाओं में मददगार होगी। अपने स्वास्थ्य का भी ख्याल रखें क्योंकि सिरदर्द, जुकाम, आदि से आपका

स्वास्थ्य भी प्रभावित हो सकता है।

कन्या– कन्या राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह मध्यम ही कहा जाएगा। फिर भी सही दिशा में किया गया परिश्रम शुभफल दायक होगा। किसी पर भी आंख मूंदकर विश्वसास न करें खासतौर से साझेदारी के कामों में सतर्कता बरतें। पारिवारिक सामन्जस्य की दृष्टि से यह माह सामान्य रहेगा। स्वास्थ्य दृष्टि से यह माह आपके लिये उत्साह वर्धक नहीं कहा जाएगा। अपने स्वास्थ्य का ख्याल रखें।

तुला– तुला राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से इस माह संघर्ष एवं अवरोधों के चलते धन प्राप्ति के योग बनेंगे। जो व्यवसाय सरकार से जुड़े हैं, वे लाभान्वित हो सकते हैं। परिवार में सामन्जस्य बना रहेगा। किन्तु जीवन साथी के साथ संबंध मधुर बनाने में प्रयास करना होगा। स्वास्थ्य की दृष्टि से आपका स्वास्थ्य माह के पूर्वार्ध में प्रभावित रह सकता है।

वृश्चिक– वृश्चिक राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से। इस माह आय में अपेक्षाकृत तथा व्ययाधिक्य का योग है। बड़ी समझदारी से कार्य करना पड़ेगा। तब कुछ सुधार होगा। अपने स्वभाव में उग्रता न आने दें। बनते बनते काम बिगड़ जाने का डर है। परिवार जनों में सामन्जस्य बिठाना मुश्किल होगा। अपने बुजुर्गों के स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। कुछ जातकों को भूमि, भवन तथा वाहन के क्रय विक्रय का योग है।

धनु– धनु राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवाय की दृष्टि से यह माह सामान्य रहेगा किन्तु नियमित निर्वाह योग्य आय होने रहने से कभी का अनुभव नहीं होगा। अपने शत्रुओं से सावधान रहे तथा क्रोध पर काबू रखें। परिवार जनों में सामन्जस्य बना रहेगा। दाम्पत्य जीवन में भी मिठास बनी रहेगी। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह आपके लिये अच्छा रहेगा।

मकर– मकर राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह सामान्यतः अच्छा ही रहेगा। कुछ नये आगन्तुक कार्य में सहायक सिद्ध होंगे। परिवार में कोई मंगल कार्य संभावित है। दाम्पत्य जीवन में मधुरता बनाये रखना ही श्रेयस्कर होगा। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह पिछले माह की अपेक्षाकृत अच्छा रहेगा।

कुंभ– कुंभ राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अधिक दौड़ धूप कराने के बाद शुभ तथा अशुभ दोनों प्रकार के फल देगा। इस माह का पूर्वार्ध अच्छा

तथा उत्तरार्ध अपेक्षाकृत कम फल दायक है। परिवार में सामन्जस्य बनाय रखना होगा तथा जीवनसाथी के साथ भी मधुरता कायम रखने के लिये प्रयासरत रहे। स्वास्थ्य की दृष्टि से थकान एवं मौसमी बीमारी आपको विपरीत रूप से प्रभावित कर सकती है।

मीन– मीन राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह चलते कार्यों में प्रगति तो देगा किन्तु सामान्य फल दायक रहेगा। मित्रगण सहायक सिद्ध होंगे। कुछ नये लोगों से संपर्क बनेंगे। कुछ जातकों को वाहन लाभ मिल सकता है, पर स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। इस माह पेट के रोग तथा आंखों के रोग आपको प्रभावित कर सकते है।

इति शुभम्

Deals in :

* **Floppy Diskettes**
* **Computer Ribbon/Ink Cartridge**
* **Computer Stationery**
* **Refilling (All Kinds of Cartridge)**
* **General Oder Suppliers**
* **Corporate Gifts**
* **Computer Hardware**

Anand Jain

Mob : 9810434770

Phone: 22456060
20116061

DATEK

Datek Support Services

F-221/A, LAXMI NAGAR,
DELHI- 110092

hp intel EPSON G ORDER UPS TVS ELECTRONICS WIPRO Applying Thought

राजधानी समाचार

परमपूज्य गुरूदेव महामहिम आचार्य श्री रूपचन्द्रजी महाराज, परम पूज्या संघ प्रवर्तिनी साध्वीश्री मंजुलाश्री जी महाराज अपने धर्म परिवार के साथ मानव मंदिर केंद्र में सानन्द विराजमान हैं धर्म की प्रभावना उत्तरोत्तर विकासोन्मुख है। कड़ाके की ठंड के बाद अब मौसम सुहावना हो गया। चारों तरफ हरियाली ही हरियाली है। पतझड़ के बाद अब सारे पेड़ पौधों पर नवांकुर फूट चुके हैं। गुलाब अपने फूलों के महक से सारे वातावरण को सुगंधित कर रहा है। जन-मन उत्साह से भरा है। कड़ाके की ठंड में घरों में दुबका इंसान पुनः अपने कार्यों में लगन के साथ जुट गया है। मानव मंदिर केंद्र में पूज्यवर के दर्शनार्थ आने वाले भक्त जन यहां के हरे भरे आंगन में फूलों की तरह महकते भौरों की तरह गूंजते गुरूकुल के बच्चों के स्वागत और गंगा के शीतल जल को पीकर अपने को तृप्त हुआ महसूस करते हैं। तत् पश्चात पूज्यवर तथा पूज्या साध्वीश्री के दर्शन पाकर कृत-कृत्य हो जाते हैं।

मानव मंदिर केंद्र द्वारा संचालित मुनि श्री रूपचन्द्र प्राकृतिक चिकित्सालय निरंतर प्रगति कर रहा है। अब इस केंद्र में पूर्ण चिकित्सा की व्यवस्था है। इसमें प्राकृतिक चिकित्सा के साथ-साथ आयुर्वेदिक, फिजियोथैरेपी, मैगनेटथैरेपी, एक्यूप्रेशर, एक्यूपंक्चर, मडथैरेपी, जल चिकित्सा, और योग द्वारा पुरानी से पुरानी बीमारियों का इलाज सफलता पूर्वक किया जाता है।

पूज्य गुरुदेव की हरियाणा यात्राः

परम पूज्य गुरूदेव आचार्यश्री रूपचन्द्र जी महाराज 25 फरवरी को मानव मंदिर हिसार में पधार रहे हैं। हिसार क्षेत्र पूज्य गुरूदेव का कार्य क्षेत्र रहा है। हिसार से ही पूज्य गुरूदेव ने इस क्रांति को नई दिशा दी थी। हिसार के भक्तजन इस क्रांति के साथ तन-मन और धन से जुड़े हैं। आपश्री का तो हिसार पधारना वर्ष में एक बार ही होता है। वहां के केंद्र की पुरी जिम्मेवारी वहां के भक्त बखूबी निभा रहे हैं। हिसार के भक्त जन पूज्यवर के दर्शन पाने के लिए पलक पावड़े बिछाये बड़ी बेसब्री से आपका इन्तजार कर रहे हैं। सरलमना साध्वी श्री मंजु श्री महाराज, साध्वी चांद कुमारी जी महाराज, साध्वी दीपां जी तथा साध्वी पद्मश्री जी पहले से ही धर्म जागरण में लगी हैं। साध्वी मंजुश्री जी महाराज उम्र से तो वृद्ध हैं पर आपका मनोबल अब भी युवा है। यह युवा पीढ़ी के लिए अनुकरणीय है।

क्या करूं ?

क्या करूं मैं ऐसे ज्योतिर्मय सूरज को लेकर,
जो मुझे यह महसूस करने को विवश करे-
मैं अन्धा हूं।

क्या करूं मैं ऐसे अमृतमय चांद को लेकर
जो मुझे यह महसूस करने को विवश करे-
मैं ज्वालामुखी हूं

क्या करूं मैं ऐसे लहरीले सागर को लेकर
जो मुझे यह महसूस करने को विवश करे-
मैं रेगिस्तान हूं।

क्या करूं मैं ऐसे त्रैकालिक शास्त्रों को लेकर
जो मुझे यह महसूस करने को विवश करे-
मैं बेवकूफ हूं।

क्यां करूं मैं ऐसे सर्वशक्तिमान भगवान को लेकर
जो मुझे यह महसूस करने को विवश करे-
मैं पंगु हूं।

मैं तो उस सूरज, उस चांद,उस सागर, उस शास्त्र
और उस भगवान को स्वीकार करता हूं, जो मेरी ज्योति,

मेरी अमृतता, मेरी सरसता, मेरी ज्ञानवत्ता, मेरी गतिमत्ता
और शक्तिमत्ता को यह कह कर उत्साहित करे-
हम तो तुम्हारे केवल विश्वास है।

○ *आचार्यश्री रूपचंद*